

आध्यात्मिक पद्धतियाँ एवं मानव कल्याण : समकालीन भारतीय समाज का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रतिभा शंकरराव साबले

रिसर्च स्कॉलर, समाजशास्त्र विभाग, मालवांचल यूनिवर्सिटी, इंदौर

डॉ. सोनाली पंडित

सुपरवाइज़र, समाजशास्त्र विभाग, मालवांचल यूनिवर्सिटी, इंदौर

सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र यह विश्लेषित करता है कि योग, ध्यान, प्रार्थना, जप, सत्संग, सेवा तथा डिजिटल आध्यात्मिक अभ्यास जैसी आध्यात्मिक पद्धतियाँ समकालीन भारतीय समाज में मानव कल्याण के मानसिक, शारीरिक, सामाजिक तथा समग्र आयामों को किस प्रकार प्रभावित करती हैं। विश्लेषण को दुर्खीम, वेबर, मार्क्स, बर्जर तथा सामाजिक पूँजी सिद्धांत के आलोक में व्याख्यायित किया गया है। निष्कर्ष दर्शाते हैं कि आध्यात्मिक पद्धतियाँ तनाव, चिंता तथा अवसाद में मध्यम स्तर की कमी, अर्थ-निर्माण तथा लचीलेपन में वृद्धि, पारिवारिक सामंजस्य तथा सामाजिक पूँजी के निर्माण से जुड़ी हैं। यह प्रभाव मुख्यतः चार सामाजिक तंत्रों—सामाजिक समर्थन, अर्थ-निर्माण, आत्म-नियमन तथा सामुदायिक जुड़ाव—के माध्यम से कार्य करता है। साथ ही, आध्यात्मिकता का बाज़ारीकरण तथा डिजिटल उपभोग इसके सामुदायिक आधार को कमजोर कर सकते हैं। शोध-पत्र नीति, शिक्षा, कार्यस्थल तथा भावी अनुभवजन्य शोध हेतु सुझाव प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द: आध्यात्मिकता, आध्यात्मिक पद्धतियाँ, मानव कल्याण, सामाजिक पूँजी, योग एवं ध्यान, डिजिटल आध्यात्मिकता, धर्म का समाजशास्त्र

1. प्रस्तावना

मानव सभ्यता के आरम्भ से ही मनुष्य अपने भौतिक अस्तित्व के साथ-साथ जीवन के अर्थ, प्रयोजन तथा आंतरिक शांति से जुड़े प्रश्नों से जूझता रहा है। इन्हीं प्रश्नों के उत्तर की खोज में आध्यात्मिकता एक ऐसे मार्ग के रूप में उभरी है जो व्यक्ति को आत्मबोध, आंतरिक संतुलन तथा व्यापक सत्ता से जुड़ाव का अनुभव कराती है। वर्तमान युग में औद्योगीकरण, शहरीकरण, वैश्वीकरण तथा प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों ने मनुष्य को भौतिक रूप से सम्पन्न तो बनाया है, परन्तु मानसिक तनाव, अवसाद, पारिवारिक विघटन, सामाजिक अलगाव तथा नैतिक मूल्यों के हास जैसी समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं। ऐसी परिस्थिति में विश्व भर में योग, ध्यान, प्रार्थना तथा सत्संग जैसी पद्धतियों के प्रति रुझान निरंतर बढ़ रहा है, और यह प्रवृत्ति अब केवल पारंपरिक समाजों तक सीमित न रहकर शहरी, शिक्षित तथा पेशेवर वर्ग में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

भारतीय संदर्भ में यह विषय विशेष महत्व रखता है। प्यू रिसर्च सेंटर (2021) के 29,999 वयस्कों पर आधारित राष्ट्रीय सर्वेक्षण के अनुसार 97 प्रतिशत भारतीय ईश्वर में विश्वास रखते हैं तथा सभी प्रमुख धर्मों का व्यापक बहुमत धर्म को अपने जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण मानता है। वेद, उपनिषद्, भगवद्गीता, बौद्ध तथा जैन दर्शन, भक्ति आन्दोलन तथा आधुनिक सुधार आन्दोलनों की लम्बी परम्परा ने भारत को

आध्यात्मिक ज्ञान का समृद्ध भंडार बनाया है। साथ ही, वैश्वीकरण के युग में योग तथा ध्यान भारत की सॉफ्ट पावर के रूप में विश्व भर में फैले हैं, किन्तु इसी प्रक्रिया में इनका व्यावसायीकरण भी हुआ है (जैन, 2014; नंदा, 2011)।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से आध्यात्मिकता केवल एक व्यक्तिगत अनुभव नहीं, अपितु एक सामाजिक परिघटना है। आध्यात्मिक पद्धतियाँ परिवार, शिक्षा, कार्यस्थल, सामुदायिक सहभागिता तथा सामाजिक विश्वास को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रभावित करती हैं। कोविड-19 महामारी ने इस तथ्य को और स्पष्ट किया कि संकट के समय आध्यात्मिक तथा धार्मिक संस्थाएँ सामूहिक संबल, सेवा तथा सामाजिक समर्थन का माध्यम बनती हैं (कॉनिग, 2020)।

यद्यपि आध्यात्मिकता तथा स्वास्थ्य पर विश्व स्तर पर व्यापक शोध हुआ है, तथापि भारतीय संदर्भ में अधिकांश अध्ययन इसे मनोवैज्ञानिक अथवा धार्मिक दृष्टि से देखते हैं। इसके सामाजिक आयामों—परिवार, सामाजिक पूँजी, सामाजिक संस्थाओं तथा सामाजिक परिवर्तन—का व्यवस्थित समाजशास्त्रीय विश्लेषण सीमित है। अतः प्रस्तुत शोध-पत्र इस मूल प्रश्न का उत्तर खोजता है कि आध्यात्मिक पद्धतियाँ समकालीन भारतीय समाज में मानव कल्याण को किस प्रकार तथा किन सामाजिक तंत्रों के माध्यम से प्रभावित करती हैं।

प्रस्तुत शोध-पत्र आठ खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड में विषय की पृष्ठभूमि तथा समस्या प्रस्तुत की गई है। द्वितीय खण्ड में 2010–2021 के प्रमुख साहित्य की समीक्षा तथा तृतीय खण्ड में उद्देश्य, परिकल्पनाएँ एवं शोध प्रविधि दी गई है। चतुर्थ खण्ड सैद्धांतिक ढाँचा प्रस्तुत करता है, जबकि पंचम एवं षष्ठ खण्ड क्रमशः आध्यात्मिक पद्धतियों के व्यक्तिगत तथा संस्थागत कल्याण-प्रभावों का विश्लेषण करते हैं। सप्तम खण्ड समकालीन चुनौतियों एवं विमर्श तथा अष्टम खण्ड निष्कर्ष एवं सुझावों से संबंधित है।

2. साहित्य समीक्षा

2.1 आध्यात्मिकता, धर्म एवं स्वास्थ्य : कॉनिग (2012) ने धर्म, आध्यात्मिकता तथा स्वास्थ्य पर सैकड़ों अध्ययनों की समीक्षा कर यह निष्कर्ष दिया कि अधिकांश अध्ययनों में धार्मिक-आध्यात्मिक सहभागिता कम अवसाद, कम आत्मघाती प्रवृत्ति, कम मादक-दुरुपयोग तथा अधिक आशा व जीवन-संतुष्टि से जुड़ी है। लुकेटी तथा सहयोगी (2021) की हालिया समीक्षा इस संबंध की पुष्टि करती है, किन्तु यह भी स्पष्ट करती है कि नकारात्मक धार्मिक संघर्ष (जैसे ईश्वर द्वारा दण्डित होने की भावना) खराब मानसिक स्वास्थ्य से जुड़ा है। पारगामेंट तथा सहयोगी (2013) ने आध्यात्मिकता को व्यक्ति की “पवित्र की खोज” के रूप में परिभाषित करते हुए उसके सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों पक्षों का सैद्धांतिक ढाँचा प्रस्तुत किया।

2.2 योग एवं ध्यान के प्रमाण : गोयल तथा सहयोगी (2014) के मेटा-विश्लेषण में 47 यादृच्छिक नियंत्रित परीक्षणों (लगभग 3,500 प्रतिभागी) के आधार पर पाया गया कि ध्यान कार्यक्रम चिंता, अवसाद तथा पीड़ा में मध्यम स्तर का सुधार लाते हैं। क्रेमर तथा सहयोगी (2013) ने अवसाद में योग के अल्पकालिक लाभों के मध्यम प्रमाण पाए। होल्ज़ेल तथा सहयोगी (2011) ने ध्यान के चार तंत्र बताए—ध्यान नियमन, शरीर-जागरूकता, भावना-नियमन तथा आत्म-बोध में परिवर्तन। राइली एवं पार्क (2015) के अनुसार योग आत्म-करुणा, सजगता तथा आध्यात्मिकता के माध्यम से तनाव कम करता है। भारतीय संदर्भ में वरंबल्ली एवं गंगाधर (2012) ने योग को “चिकित्सीय मूल्य वाली आध्यात्मिक पद्धति” माना।

2.3 आध्यात्मिकता एवं सामाजिक संस्थाएँ : लिम एवं पटनम (2010) ने दिखाया कि धार्मिक सेवाओं में नियमित उपस्थिति से जीवन-संतुष्टि में वृद्धि का मुख्य कारण आस्था नहीं, अपितु समुदाय में बने घनिष्ठ

मित्रता-संबंध हैं। महोनी (2010) ने दशक भर के शोध की समीक्षा कर “संबंधात्मक आध्यात्मिकता” का ढाँचा दिया, जिसके अनुसार साझा आध्यात्मिक गतिविधियाँ वैवाहिक संतुष्टि तथा पालन-पोषण की गुणवत्ता से जुड़ी हैं। काराकास (2010) ने कार्यस्थल आध्यात्मिकता को कर्मचारी कल्याण, अर्थपूर्णता तथा सामुदायिकता की भावना से जोड़ा। वैंडरवील (2017) ने धार्मिक समुदाय को परिवार, कार्य तथा शिक्षा के साथ मानव उत्कर्ष के चार प्रमुख मार्गों में से एक माना।

2.4 बदलता स्वरूप — व्यक्तिकरण, बाज़ार एवं डिजिटल माध्यम : एमरमैन (2013) ने “आध्यात्मिक किन्तु धार्मिक नहीं” के द्विआधारी विभाजन को अपर्याप्त बताते हुए आध्यात्मिकता की कई सामाजिक रूपरेखाएँ पहचानीं। जैन (2014) ने योग के वैश्विक व्यावसायीकरण का तथा नंदा (2011) ने भारत में वैश्वीकरण से प्रेरित “ईश्वर बाज़ार” का विश्लेषण किया। कोपमैन एवं इकेगामे (2012) ने दक्षिण एशिया में गुरु संस्था की सामाजिक-राजनीतिक भूमिका का अध्ययन किया, जबकि कैपबेल (2013) ने डिजिटल धर्म को ऑनलाइन तथा ऑफलाइन धार्मिक जीवन के मिश्रण के रूप में परिभाषित किया।

शोध अंतराल : उपर्युक्त साहित्य का अधिकांश भाग पाश्चात्य नमूनों तथा मनोवैज्ञानिक-नैदानिक दृष्टिकोण पर आधारित है। भारतीय संदर्भ में आध्यात्मिक पद्धतियों, सामाजिक पूँजी तथा व्यावसायीकरण को एक साथ जोड़ने वाला समग्र समाजशास्त्रीय विश्लेषण अभी भी अपर्याप्त है।

3. अध्ययन के उद्देश्य एवं शोध प्रविधि

3.1 उद्देश्य : प्रस्तुत शोध-पत्र के उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

- आध्यात्मिकता की अवधारणा, इसके आयामों तथा धर्म एवं धार्मिकता से इसके भेद को स्पष्ट करना।
- समकालीन भारतीय समाज में प्रचलित प्रमुख आध्यात्मिक पद्धतियों—योग, ध्यान, प्रार्थना, जप, सत्संग एवं सेवा—के स्वरूप का विश्लेषण करना।

3.2 शोध प्रारूप : यह अध्ययन वर्णनात्मक-विश्लेषणात्मक एवं सैद्धांतिक प्रकृति का है तथा पूर्णतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है।

3.3 स्रोत तथा चयन मानदण्ड : उपलब्ध साहित्य का चयन तीन मानदण्डों पर किया गया—(क) प्रकाशन काल 2010–2021; (ख) समकक्ष-समीक्षित शोध-पत्रिकाएँ, मान्य शैक्षणिक प्रकाशकों के ग्रंथ तथा राष्ट्रीय स्तर के सर्वेक्षण; (ग) आध्यात्मिकता तथा मानसिक, शारीरिक अथवा सामाजिक कल्याण के संबंध का प्रत्यक्ष विवेचन। इस आधार पर बीस स्रोत चुने गए, जिनमें मेटा-विश्लेषण एवं व्यवस्थित समीक्षाएँ, सैद्धांतिक समीक्षाएँ, समाजशास्त्रीय-नृवंशशास्त्रीय ग्रंथ तथा एक राष्ट्रीय सर्वेक्षण सम्मिलित हैं।

3.4 विश्लेषण विधि : स्रोतों का विषयगत विश्लेषण किया गया। प्रत्येक स्रोत से आध्यात्मिक पद्धति का प्रकार, कल्याण का आयाम, प्रभाव की दिशा तथा प्रस्तावित सामाजिक तंत्र संकेतित किए गए, तत्पश्चात् इन्हें समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के आलोक में व्याख्यायित किया गया।

4. सैद्धांतिक एवं वैचारिक ढाँचा

4.1 आध्यात्मिकता की अवधारणा : आध्यात्मिकता व्यक्ति की अर्थ, उद्देश्य तथा स्वयं से परे किसी पवित्र सत्ता से जुड़ाव की खोज है (पारगामेंट एवं अन्य, 2013)। धर्म जहाँ संस्थागत विश्वासों, अनुष्ठानों तथा संगठनों की एक व्यवस्था है, वहीं धार्मिकता उस व्यवस्था में व्यक्ति की सहभागिता की मात्रा है। आध्यात्मिकता इन दोनों से अधिक व्यापक तथा अनुभव-केन्द्रित है; वह धर्म के भीतर भी संभव है और

उससे बाहर भी (एमरमैन, 2013)। इसके पाँच प्रमुख आयाम हैं—अस्तित्वगत, अनुभवात्मक, नैतिक, सामाजिक तथा सामुदायिक।

4.2 मानव कल्याण की अवधारणा : मानव कल्याण एक बहुआयामी अवधारणा है। सेलिगमैन (2011) का पर्मा मॉडल कल्याण को सकारात्मक भावना, संलग्नता, संबंध, अर्थ तथा उपलब्धि के रूप में परिभाषित करता है। वैडरवील (2017) ने इसे और विस्तृत कर सुख एवं जीवन-संतुष्टि, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, अर्थ एवं उद्देश्य, चरित्र एवं सद्गुण तथा घनिष्ठ सामाजिक संबंध—इन पाँच क्षेत्रों में “मानव उत्कर्ष” के रूप में प्रस्तुत किया। प्रस्तुत शोध-पत्र कल्याण के चार आयाम स्वीकार करता है—मानसिक, शारीरिक-भावनात्मक, सामाजिक-सामुदायिक तथा समग्र।

4.3 समाजशास्त्रीय सिद्धांत :

- **संरचनात्मक-कार्यात्मक दृष्टिकोण :** दुर्खीम के अनुसार पवित्र के चारों ओर सामूहिक अनुष्ठान “सामूहिक उत्तेजना” उत्पन्न करते हैं, जो सामाजिक एकीकरण को सुदृढ़ करती है तथा एनॉमी से रक्षा करती है। सत्संग, कीर्तन तथा सामूहिक ध्यान इसके समकालीन उदाहरण हैं।
- **वेबर का दृष्टिकोण :** वेबर की बुद्धिसंगतीकरण तथा विश्व के विमोहन की अवधारणा यह समझाती है कि आधुनिक मनुष्य पुनः अर्थ की खोज में आध्यात्मिकता की ओर क्यों मुड़ता है। करिश्मा का नैयतिकीकरण गुरु-केन्द्रित आन्दोलनों के संस्थागत संगठन बनने की प्रक्रिया को स्पष्ट करता है (कोपमैन एवं इकेगामे, 2012)।
- **संघर्षवादी दृष्टिकोण :** मार्क्सवादी दृष्टि से आध्यात्मिकता सामाजिक असमानता को वैधता देने का साधन भी बन सकती है। नव-उदारवादी संदर्भ में तनाव का उत्तरदायित्व संरचना से हटाकर व्यक्ति पर डाल देना तथा आध्यात्मिकता का वस्तुकरण इसी आलोचना के केन्द्र में है (जैन, 2014; नंदा, 2011)।
- **प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद एवं बर्जर :** आध्यात्मिक अनुभव व्यक्तिगत आख्यानो तथा प्रतीकों के माध्यम से अर्थ प्राप्त करता है। बर्जर की “पवित्र छत्र” तथा बहुलतावाद की अवधारणा यह बताती है कि आधुनिक व्यक्ति अनेक विकल्पों में से अपना आध्यात्मिक मार्ग चुनता है।
- **सामाजिक पूँजी सिद्धांत :** पटनम के अनुसार सामाजिक नेटवर्क, पारस्परिकता तथा विश्वास सामूहिक कल्याण का आधार हैं; आध्यात्मिक समुदाय बंधनकारी तथा सेतुकारी दोनों प्रकार की पूँजी का निर्माण करते हैं (लिम एवं पटनम, 2010)।

4.4 वैचारिक मॉडल : इन सिद्धांतों के आधार पर प्रस्तुत शोध-पत्र यह मॉडल प्रस्तावित करता है कि आध्यात्मिक पद्धतियाँ (स्वतंत्र चर) चार मध्यस्थ तंत्रों—सामाजिक समर्थन, अर्थ-निर्माण, आत्म-नियमन तथा सामुदायिक जुड़ाव—के माध्यम से मानव कल्याण (आश्रित चर) को प्रभावित करती हैं, तथा इस संबंध को सामाजिक-जनांकिकीय कारक, व्यावसायीकरण एवं डिजिटल माध्यम संशोधित करते हैं।

4.5 भारतीय दृष्टिकोण : भारतीय परम्परा में आध्यात्मिकता जीवन से पृथक नहीं, अपितु उसका अभिन्न अंग रही है। पुरुषार्थ की अवधारणा—धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष—भौतिक तथा आध्यात्मिक जीवन के संतुलन पर बल देती है। भगवद्गीता का कर्मयोग सामाजिक दायित्वों के निर्वहन को ही साधना मानता है, जबकि भक्ति आन्दोलन ने जाति एवं लिंग की सीमाओं से परे सामूहिक आध्यात्मिक सहभागिता को लोकप्रिय बनाया। इस दृष्टि से भारतीय आध्यात्मिकता पाश्चात्य “व्यक्तिगत आत्म-विकास” मॉडल की तुलना में अधिक सामुदायिक तथा नैतिक-सामाजिक स्वरूप रखती है। यही विशेषता इसे सामाजिक

पूँजी तथा सामाजिक कल्याण के अध्ययन हेतु एक उपयुक्त क्षेत्र बनाती है, तथा पाश्चात्य निष्कर्षों को भारतीय संदर्भ में सीधे लागू करने से पूर्व सावधानी की माँग करती है।

5. प्रमुख आध्यात्मिक पद्धतियाँ एवं मानव कल्याण

स्रोतों का विषयगत विश्लेषण दर्शाता है कि प्रत्येक आध्यात्मिक पद्धति कल्याण के किसी एक आयाम पर विशेष प्रभाव डालती है, किन्तु सभी पद्धतियाँ अंततः समग्र कल्याण की ओर अग्रसर होती हैं।

5.1 योग एवं ध्यान : पतंजलि के अष्टांग योग में यम-नियम के नैतिक अनुशासन से लेकर ध्यान एवं समाधि तक का मार्ग शामिल है। समकालीन समाज में योग मुख्यतः आसन, प्राणायाम तथा ध्यान के रूप में प्रचलित है। मेटा-विश्लेषण दर्शाते हैं कि ध्यान चिंता एवं अवसाद में मध्यम कमी लाता है (गोयल एवं अन्य, 2014) तथा योग अवसाद में अल्पकालिक लाभ देता है (क्रेमर एवं अन्य, 2013)। इसके पीछे ध्यान-नियमन, भावना-नियमन तथा शरीर-मन संबंध के तंत्र कार्य करते हैं (होल्लेज एवं अन्य, 2011; राइली एवं पार्क, 2015)।

5.2 प्रार्थना, जप एवं साधना : प्रार्थना व्यक्ति तथा पवित्र सत्ता के मध्य संवाद है, जबकि जप में मंत्र अथवा नाम की लयबद्ध आवृत्ति होती है। ये पद्धतियाँ संकट के समय धार्मिक सामना का साधन बनती हैं, नियंत्रण की भावना, आशा तथा अर्थ प्रदान करती हैं (पारगामेंट एवं अन्य, 2013)। कोविड-19 के दौरान घर पर प्रार्थना, ध्यान तथा सेवा-कार्य ने अलगाव एवं भय के विरुद्ध लचीलेपन का काम किया (कॉनिंग, 2020)।

5.3 सत्संग, सेवा एवं सामुदायिक गतिविधियाँ : सत्संग, कीर्तन, लंगर तथा निःस्वार्थ सेवा आध्यात्मिकता का सामूहिक आयाम हैं। इनका कल्याण-प्रभाव मुख्यतः सामाजिक संबंधों के माध्यम से कार्य करता है; लिम एवं पटनम (2010) के अनुसार जीवन-संतुष्टि में वृद्धि का स्रोत समुदाय में बने घनिष्ठ मित्र हैं। दुर्खीमीय दृष्टि से यह सामूहिक अनुष्ठान सामाजिक एकीकरण का साधन है।

5.4 डिजिटल आध्यात्मिक पद्धतियाँ : ध्यान-एप, ऑनलाइन सत्संग, सीधा प्रसारित आरती तथा सोशल मीडिया पर आध्यात्मिक सामग्री ने आध्यात्मिकता की पहुँच को बढ़ाया है (कैंपबेल, 2013)। ये पद्धतियाँ सुलभ तो हैं, किन्तु इनमें आमने-सामने के सामुदायिक संबंधों की कमी इनके सामाजिक कल्याण-प्रभाव को सीमित कर सकती है।

तालिका 1 : आध्यात्मिक पद्धतियाँ, कल्याण आयाम एवं प्रमुख तंत्र

पद्धति	प्रमुख कल्याण आयाम	प्रमुख सामाजिक/मनोवैज्ञानिक तंत्र	प्रमाण का स्तर	स्रोत
योग	शारीरिक, मानसिक	शरीर-मन संबंध, आत्म-करुणा, सजगता	मध्यम (मेटा-विश्लेषण)	क्रेमर एवं अन्य, 2013; राइली एवं पार्क, 2015
ध्यान	मानसिक, भावनात्मक	ध्यान एवं भावना-नियमन, आत्म-बोध	मध्यम (47 परीक्षण)	गोयल एवं अन्य, 2014;

पद्धति	प्रमुख कल्याण आयाम	प्रमुख सामाजिक/मनोवैज्ञानिक तंत्र	प्रमाण का स्तर	स्रोत
				होल्लेज एवं अन्य, 2011
प्रार्थना एवं जप	मानसिक, अस्तित्वगत	धार्मिक सामना, आशा, अर्थ- निर्माण	अवलोकनात्मक अध्ययन	पारगामेंट एवं अन्य, 2013; कॉनिंग, 2012
सत्संग एवं सेवा	सामाजिक, सामुदायिक	सामाजिक नेटवर्क, विश्वास, एकीकरण	सर्वेक्षण- आधारित	लिम एवं पटनम, 2010; वैंडरवील, 2017
डिजिटल आध्यात्मिकता	मानसिक (सुलभता)	निरंतरता, आभासी समुदाय	सीमित एवं उभरता	कैंपबेल, 2013

6. आध्यात्मिकता, सामाजिक संस्थाएँ एवं सामाजिक पूँजी

आध्यात्मिक पद्धतियों का कल्याण-प्रभाव व्यक्ति तक सीमित न रहकर परिवार, शिक्षा, कार्यस्थल तथा समुदाय जैसी सामाजिक संस्थाओं तक फैलता है।

6.1 परिवार एवं वैवाहिक जीवन : भारतीय परिवार में सामूहिक पूजा, पर्व-त्योहार तथा संस्कार पीढ़ियों को जोड़ने वाले सूत्र हैं। महोनी (2010) के "संबंधात्मक आध्यात्मिकता" ढाँचे के अनुसार जब दम्पति अपने संबंध को पवित्र मानते हैं तथा साथ मिलकर आध्यात्मिक गतिविधियाँ करते हैं, तो वैवाहिक संतुष्टि बढ़ती है तथा संघर्ष का रचनात्मक समाधान संभव होता है। किन्तु यही अध्ययन यह भी संकेत करता है कि आध्यात्मिक मतभेद परिवार में तनाव का कारण भी बन सकते हैं।

6.2 शिक्षा एवं कार्यस्थल : विद्यालयों में योग, ध्यान तथा मूल्य-शिक्षा का समावेश एकाग्रता, भावना-नियमन तथा नैतिक विकास का साधन माना जा रहा है। कार्यस्थल पर आध्यात्मिकता कर्मचारी कल्याण, कार्य में अर्थपूर्णता, सामुदायिकता की भावना तथा संगठनात्मक प्रतिबद्धता को बढ़ाती है (काराकास, 2010)। आलोचकों का तर्क है कि कॉर्पोरेट संदर्भ में ध्यान कार्यक्रम कभी-कभी अत्यधिक कार्यभार जैसी संरचनात्मक समस्याओं को व्यक्तिगत समायोजन की समस्या में बदल देते हैं।

6.3 सामाजिक पूँजी एवं सामुदायिक एकजुटता : आध्यात्मिक समुदाय सामाजिक पूँजी के सबसे सशक्त स्रोतों में से हैं। वे नियमित आमने-सामने के मिलन, साझा मूल्यों तथा पारस्परिक सहायता के माध्यम से विश्वास तथा सहयोग का निर्माण करते हैं (लिम एवं पटनम, 2010; वैंडरवील, 2017)। गुरुद्वारों के लंगर, आश्रमों के सेवा-कार्य तथा आपदा राहत में आध्यात्मिक संगठनों की भूमिका इसके भारतीय उदाहरण हैं। गुरु-केन्द्रित संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सेवा के व्यापक तंत्र संचालित करते हैं (कोपमैन एवं इकेगामे, 2012)।

6.4 सामाजिक सद्भाव एवं उसकी सीमाएँ : सामाजिक पूँजी का प्रभाव दोहरा हो सकता है। बंधनकारी पूँजी समूह के भीतर एकजुटता तो बढ़ाती है, किन्तु बाहरी समूहों से दूरी भी उत्पन्न कर सकती है। प्यू

रिसर्च सेंटर (2021) के सर्वेक्षण ने भारत में धार्मिक सहिष्णुता के प्रति व्यापक समर्थन के साथ-साथ सामाजिक संबंधों में धार्मिक पृथक्ता की प्रवृत्ति भी दर्ज की। अतः सेतुकारी पूँजी को प्रोत्साहित करने वाली सार्वभौमिक आध्यात्मिक पद्धतियाँ—जैसे योग, ध्यान तथा अंतर-धार्मिक सेवा—सामाजिक सद्भाव के लिए विशेष महत्त्व रखती हैं।

6.5 सामाजिक-जनांकिकीय भिन्नताएँ : आध्यात्मिक अभ्यास का स्वरूप सामाजिक स्थिति के अनुसार भिन्न होता है। उपलब्ध साहित्य संकेत करता है कि महिलाएँ प्रायः प्रार्थना, व्रत तथा घरेलू अनुष्ठानों में अधिक सक्रिय होती हैं, जबकि शहरी, शिक्षित तथा उच्च आय वर्ग में योग, ध्यान-कार्यक्रम तथा डिजिटल आध्यात्मिकता अधिक लोकप्रिय है (जैन, 2014; नंदा, 2011)। ग्रामीण क्षेत्रों में सत्संग, कीर्तन तथा तीर्थयात्रा जैसी सामूहिक पद्धतियाँ अधिक प्रचलित हैं। आयु के साथ आध्यात्मिक सहभागिता सामान्यतः बढ़ती है, क्योंकि वृद्धावस्था में अर्थ-निर्माण तथा सामाजिक समर्थन की आवश्यकता अधिक होती है। ये भिन्नताएँ परिकल्पना 4 का आधार हैं तथा यह दर्शाती हैं कि आध्यात्मिकता के कल्याण-लाभ समाज में समान रूप से वितरित नहीं हैं।

7. समकालीन चुनौतियाँ एवं विमर्श

7.1 आध्यात्मिकता का बाज़ारीकरण : वैश्वीकरण तथा नव-उदारवाद ने आध्यात्मिकता को एक उद्योग में बदल दिया है। योग-वस्त्र, वेलनेस रिट्रीट, आध्यात्मिक पर्यटन तथा गुरु-ब्रांडिंग इसके उदाहरण हैं। जैन (2014) के अनुसार योग प्रतिसंस्कृति से लोकप्रिय संस्कृति तक की यात्रा में एक उपभोक्ता उत्पाद बन गया है, जबकि नंदा (2011) भारत में मध्यवर्गीय समृद्धि, राज्य एवं बाज़ार के गठजोड़ से उभरते धार्मिक बाज़ार का विश्लेषण करती हैं। इस प्रक्रिया में आध्यात्मिकता का नैतिक एवं सामुदायिक आयाम कमजोर होता है तथा वह व्यक्तिगत तनाव-प्रबंधन की तकनीक मात्र बनकर रह जाती है। इसके अतिरिक्त, कुछ गुरु-केन्द्रित संगठनों में शोषण, अंधानुकरण तथा सत्ता के केन्द्रीकरण की समस्याएँ भी सामने आई हैं (कोपमैन एवं इकेगामे, 2012)।

7.2 डिजिटल मीडिया एवं आध्यात्मिक उपभोग : डिजिटल माध्यमों ने आध्यात्मिकता को लोकतांत्रिक बनाया है, विशेषकर महामारी के दौरान जब सामूहिक सभाएँ संभव नहीं थीं। किन्तु कैपबेल (2013) का विश्लेषण संकेत करता है कि ऑनलाइन धार्मिक जीवन में सत्ता का स्वरूप बदलता है तथा सहभागिता अधिक व्यक्तिगत एवं चयनात्मक हो जाती है। इन्फ्लुएंसर-आधारित आध्यात्मिकता भ्रामक सूचना तथा सतही उपभोग को भी बढ़ावा दे सकती है। दूसरी ओर, डिजिटल माध्यमों ने उन वर्गों—जैसे वृद्धजन, दिव्यांगजन तथा प्रवासी भारतीय—को भी आध्यात्मिक सहभागिता का अवसर दिया है, जो भौतिक रूप से सामूहिक सभाओं में सम्मिलित नहीं हो पाते। अतः डिजिटल आध्यात्मिकता को पूर्णतः नकारात्मक नहीं माना जा सकता; इसका कल्याण-प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि वह आमने-सामने के सामुदायिक संबंधों का पूरक बनती है अथवा उनका स्थान ले लेती है।

7.3 विमर्श : समग्र विश्लेषण से तीन प्रमुख निष्कर्ष उभरते हैं।

- **सकारात्मक किन्तु मध्यम प्रभाव :** आध्यात्मिक पद्धतियों का मानसिक कल्याण पर प्रभाव सुसंगत रूप से सकारात्मक है, किन्तु इसका आकार मध्यम है तथा यह अन्य स्वास्थ्य-व्यवहारों का विकल्प नहीं, पूरक है (गोयल एवं अन्य, 2014; लुकेटी एवं अन्य, 2021)। यह परिकल्पना 1 को सैद्धांतिक समर्थन देता है।

- **सामाजिक तंत्र निर्णायक हैं :** कल्याण का बड़ा भाग आस्था से नहीं, अपितु सामुदायिक संबंधों, सामाजिक समर्थन तथा अर्थ-निर्माण से आता है (लिम एवं पटनम, 2010)। यह दुर्खीम की सामूहिक चेतना की अवधारणा की समकालीन पुष्टि है तथा परिकल्पना 2 एवं 3 को आधार प्रदान करता है।
- **स्वरूप महत्त्वपूर्ण है :** सामुदायिक, नैतिक तथा निरंतर अभ्यास पर आधारित पारंपरिक पद्धतियों की तुलना में व्यावसायिक तथा डिजिटल रूपों के कल्याण-प्रभाव अधिक अस्थायी हो सकते हैं (जैन, 2014; कैपबेल, 2013), जो परिकल्पना 5 के अनुरूप है। साथ ही, नकारात्मक धार्मिक सामना, कट्टरता तथा शोषणकारी संगठन इस संबंध को उलट भी सकते हैं (पारगामेंट एवं अन्य, 2013)।

इस प्रकार आध्यात्मिकता को न तो एक सार्वभौमिक उपचार माना जा सकता है, न ही केवल विचारधारा। इसका कल्याण-प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि वह किस सामाजिक संदर्भ, संगठनात्मक स्वरूप तथा संबंधों के तंत्र में अभ्यास की जाती है।

8. निष्कर्ष एवं सुझाव

प्रस्तुत शोध-पत्र इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि आध्यात्मिक पद्धतियाँ समकालीन भारतीय समाज में मानव कल्याण का एक सार्थक सामाजिक संसाधन हैं। योग एवं ध्यान मानसिक तथा शारीरिक कल्याण में, प्रार्थना एवं जप अर्थ-निर्माण तथा संकट-सामना में, तथा सत्संग एवं सेवा सामाजिक पूँजी के निर्माण में विशेष योगदान देते हैं। इन सभी प्रभावों का साझा आधार सामाजिक संबंध, अर्थ तथा आत्म-नियमन है। साथ ही, व्यावसायीकरण एवं डिजिटल उपभोग इस सामुदायिक आधार को कमजोर करके आध्यात्मिकता को एक व्यक्तिगत उत्पाद में बदलने का जोखिम उत्पन्न करते हैं।

सुझाव :

- **नीतिगत :** राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य एवं कल्याण नीतियों में साक्ष्य-आधारित योग एवं ध्यान को पूरक उपाय के रूप में सम्मिलित किया जाए, किन्तु नैदानिक उपचार के विकल्प के रूप में नहीं।
- **शैक्षिक :** विद्यालयों एवं उच्च शिक्षा संस्थानों में पंथ-निरपेक्ष मूल्य-शिक्षा, योग एवं ध्यान को भावनात्मक कल्याण कार्यक्रमों से जोड़ा जाए।
- **कार्यस्थल :** संगठन कर्मचारी कल्याण हेतु ध्यान-कार्यक्रमों के साथ-साथ कार्यभार एवं कार्य-संस्कृति जैसे संरचनात्मक कारकों पर भी ध्यान दें।
- **सामुदायिक :** सेतुकारी सामाजिक पूँजी बढ़ाने हेतु अंतर-धार्मिक सेवा, सामूहिक योग एवं सामुदायिक आध्यात्मिक केन्द्रों को प्रोत्साहित किया जाए।
- **नियामक :** आध्यात्मिक संगठनों के वित्तीय लेन-देन में पारदर्शिता तथा ऑनलाइन आध्यात्मिक सामग्री में भ्रामक स्वास्थ्य-दावों पर निगरानी सुनिश्चित की जाए।
- **भावी शोध :** प्रस्तावित परिकल्पनाओं (1 से 5) का भारतीय नमूनों पर अनुदैर्घ्य एवं मिश्रित-पद्धति अध्ययनों द्वारा परीक्षण किया जाए, विशेषकर ग्रामीण-शहरी तथा लिंगगत अंतरों के संदर्भ में।

अंततः, आध्यात्मिकता का सबसे स्थायी कल्याण-प्रभाव वहाँ दिखाई देता है जहाँ वह व्यक्तिगत अभ्यास को सामुदायिक जुड़ाव तथा नैतिक आचरण से जोड़ती है।

इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन आध्यात्मिकता को एक व्यक्तिगत आस्था मात्र के स्थान पर एक सामाजिक संसाधन के रूप में देखने का आग्रह करता है, जिसका संरक्षण तथा विवेकपूर्ण उपयोग व्यक्ति, परिवार तथा समाज—तीनों के कल्याण हेतु आवश्यक है।

संदर्भ सूची

- एमरमैन, एन. टी. (2013). आध्यात्मिक किन्तु धार्मिक नहीं? धर्म के अध्ययन में द्विआधारी विकल्पों से परे. जर्नल फ़ॉर द साइंटिफ़िक स्टडी ऑफ़ रिलिजन, 52(2), 258–278.
- काराकास, एफ. (2010). संगठनों में आध्यात्मिकता एवं कार्य-निष्पादन : एक साहित्य समीक्षा. जर्नल ऑफ़ बिज़नेस एथिक्स, 94(1), 89–106.
- कैपबेल, एच. ए. (संपा.). (2013). डिजिटल धर्म : नव मीडिया जगत में धार्मिक अभ्यास की समझ. रूटलेज.
- कॉनिग, एच. जी. (2012). धर्म, आध्यात्मिकता एवं स्वास्थ्य : शोध एवं नैदानिक निहितार्थ. आईएसआरएन साइकियाट्री, 2012, लेख 278730.
- कॉनिग, एच. जी. (2020). कोविड-19 महामारी के दौरान आस्था को कर्म में बदलकर स्वास्थ्य एवं कल्याण बनाए रखना. जर्नल ऑफ़ रिलिजन एंड हेल्थ, 59(5), 2205–2214.
- कोपमैन, जे., एवं इकेगामे, ए. (संपा.). (2012). दक्षिण एशिया में गुरु : नए अंतर-विषयक परिप्रेक्ष्य. रूटलेज.
- क्रेमर, एच., लाउखे, आर., लैंगहॉर्स्ट, जे., एवं डोबोस, जी. (2013). अवसाद हेतु योग : एक व्यवस्थित समीक्षा एवं मेटा-विश्लेषण. डिप्रेशन एंड एंग्ज़ायटी, 30(11), 1068–1083.
- गोयल, एम., सिंह, एस., सिबिंगा, ई. एम. एस., एवं अन्य. (2014). मनोवैज्ञानिक तनाव एवं कल्याण हेतु ध्यान कार्यक्रम : एक व्यवस्थित समीक्षा एवं मेटा-विश्लेषण. जामा इंटरनल मेडिसिन, 174(3), 357–368.
- जैन, ए. आर. (2014). योग का विक्रय : प्रतिसंस्कृति से लोकप्रिय संस्कृति तक. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- नंदा, एम. (2011). ईश्वर का बाज़ार : वैश्वीकरण भारत को किस प्रकार अधिक हिन्दू बना रहा है. मंथली रिव्यू प्रेस.
- पारगामेंट, के. आई., महोनी, ए., एक्सलाइन, जे. जे., जोन्स, जे. डब्ल्यू., एवं शफ़्रांस्के, ई. पी. (2013). धर्म एवं आध्यात्मिकता के मनोविज्ञान हेतु एक एकीकृत प्रतिमान की परिकल्पना. के. आई. पारगामेंट (संपा.), एपीए हैंडबुक ऑफ़ साइकोलॉजी, रिलिजन, एंड स्पिरिचुअलिटी (खंड 1, पृ. 3–19). अमेरिकन साइकोलॉजिकल एसोसिएशन.
- प्यूरिसर्व सेंटर. (2021, 29 जून). भारत में धर्म : सहिष्णुता एवं पृथक्करण. प्यूरिसर्व सेंटर.
- महोनी, ए. (2010). परिवारों में धर्म, 1999–2009 : एक संबंधात्मक आध्यात्मिकता ढाँचा. जर्नल ऑफ़ मैरिज एंड फैमिली, 72(4), 805–827.
- राइली, के. ई., एवं पार्क, सी. एल. (2015). योग तनाव को कैसे कम करता है? परिवर्तन के तंत्रों की व्यवस्थित समीक्षा एवं भावी शोध हेतु मार्गदर्शिका. हेल्थ साइकोलॉजी रिव्यू, 9(3), 379–396.
- लिम, सी., एवं पटनम, आर. डी. (2010). धर्म, सामाजिक नेटवर्क एवं जीवन-संतुष्टि. अमेरिकन सोशियोलॉजिकल रिव्यू, 75(6), 914–933.

- लुकेटी, जी., कॉनिग, एच. जी., एवं लुकेटी, ए. एल. जी. (2021). आध्यात्मिकता, धार्मिकता एवं मानसिक स्वास्थ्य : वर्तमान वैज्ञानिक साक्ष्यों की समीक्षा. वर्ल्ड जर्नल ऑफ़ क्लिनिकल केसेज़, 9(26), 7620–7631.
- वरंबल्ली, एस., एवं गंगाधर, बी. एन. (2012). योग : मनोचिकित्सा में चिकित्सीय मूल्य वाली एक आध्यात्मिक पद्धति. एशियन जर्नल ऑफ़ साइकियाट्री, 5(2), 186–189.
- वैंडरवील, टी. जे. (2017). मानव उत्कर्ष के संवर्धन पर. प्रोसीडिंग्स ऑफ़ द नेशनल एकेडमी ऑफ़ साइंसेज़, 114(31), 8148–8156.
- सेलिगमैन, एम. ई. पी. (2011). उत्कर्ष : सुख एवं कल्याण की एक नई दूरदर्शी समझ. फ्री प्रेस.
- होल्ज़ेल, बी. के., लज़ार, एस. डब्ल्यू, गार्ड, टी., शूमन-ओलिवियर, ज़ेड., वागो, डी. आर., एवं ओट, यू. (2011). सचेतन ध्यान कैसे कार्य करता है? वैचारिक एवं तंत्रिकीय परिप्रेक्ष्य से क्रिया-तंत्रों का प्रस्ताव. पर्सपेक्टिव्स ऑन साइकोलॉजिकल साइंस, 6(6), 537–559.